National Journal of Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2021; 1(38): 217-219
© 2021 **NJHSR**
www.sanskritarticle.com

डॉ० राका शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर
संस्कृत-विभाग,
एन.के.बी.एम.जी.कॉलेज, चंदौसी

Correspondence:
डॉ० राका शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर
संस्कृत-विभाग,
एन.के.बी.एम.जी.कॉलेज, चंदौसी

'रामानन्ददिग्विजयम्' में प्रपत्ति

डॉ० राका शर्मा

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.20341579

प्रपत्ति के पांच अंग होते हैं। इन पांचो अंगों का प्रयोग 'रामानन्ददिग्विजय' में बहुत ही अच्छी प्रकार से किया गया है-

1. भगवान की अनुकूलता का प्राप्त करना 2 प्रतिकूलता का त्याग 3 भगवान मेरी रक्षा करेंगे ऐसा विश्वास 4. प्रभु ही मेरी रक्षा करने वाले हों, इस प्रकार से उनका अङ्गीकार और 5 दीनता

अनुकूलताप्रणयन सततं
प्रतिकूलतात्यजनमादरतः।
वरणं च विश्वसनभान्तरिकं,
शरणागतेः कृपणताङ.गमिति।।[1]

जिसको मन से अपना शरण निश्चित कर लिया। उसी की आज्ञा से सब व्यवहार करना, उसी का हृदय में सदा भजन करना, इसे विद्वानों ने "अनुकूलता" कहा है। श्रुति विहित कर्मों में स्वमन से वैराग्य धारण करना और प्रतिषिद्ध कर्मों में अनुराग न रखने को ही "प्रतिकूलता" कहा गया है। यदि कोई प्रपन्न भ्रम से भी प्रभु की आज्ञा का उलंघन कर दे, तो उसकी प्रपत्ति सर्वथा नष्ट हो जाती हैं और वह पुनः संसार जन्य दुःख में निमग्न हो जाता है -

शरणं हि यः स्वमनसा नियत
स्तदनुज्ञया व्यवहृतेः करणम्।
स्मरणं च तस्य मनता नितरा-
मनुकूलतेति विबुधैः कथिता ।।[2]
श्रुति जातसंविहितकृत्यचये,
रतिधारणं रतितातिर्मनसि।
प्रतिषिद्धकर्मणि सदा विबुधैः,
प्रतिकूलतेति कथितासकलैः।।
प्रभुशिष्टिरत्र दलिता भवति,

भ्रमतोऽपि केनचिदबुद्धि जुषा।
भवति प्रपत्तिरनघा विहता.
पुनरेत्यसा भवभवंकलिलम्।।3

हे जगदीश। आप ही हमारे उपाय बन जावें, शरणागत की रक्षा करें, इस प्रकार प्रभु के प्रति प्रार्थना करने को विद्वानों ने "वरण" कहा है -

भवतादुपाय इह मे त्वमलं
जगदीश, रक्ष शरणं पतितम्।
हृदयेन तं प्रति तदेति मतिः,
प्रणिगद्यते बुधजनैवंरणम्।4

विपत्ति के आने पर और विषम दशा में मेरे प्रभु मेरी रक्षा करने में समर्थ हैं, इस प्रकार प्रतिक्षण अपने हृदय में दृढ़ भावना को पुष्ट करने का नाम "विश्वास" है.

मम रक्षणे प्रभुरयं कुशलो,
विपदागमेऽथ समये विषमे ।
इति मानसे प्रतिपलं नितरां,
दृढभावना भवति विश्वसनम् ।।
प्रभुरस्ति में परमकारुणिकः,
परमोऽस्त्युदार उदितोऽसुमताम् ।
मम रक्षणाय त दधाति गती -
रिति तद्विचार इह विश्वसनम् ।।5

यदि कोई व्यक्ति भगवान् की कृपा पर सन्देह करता है तो वह संशयात्मा पुनः पुनः आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है-

मदमेयपातकसुपुञ्जगिरि -
भविता कथं ननु भिदापथगः
यदि भेदनं भवति तस्य न त -
त्कथमापयिष्यति निजं स पदम् ।।
यदि कोऽपि नैजहृदये तनुते
कुविचारमेनमिति खिन्नमनाः ।
स उपायतः पतित एव भवे -
त्पुनरेष्यतीह भवभीतिभरम् ।।
अहमस्मि पापनिरतः परमं
दुरवापमर्थितमिदं च मम ।
अथ दास्यते स कथमेतदिति
श्रितसंशयो भवमुपैति पुनः ।।6

हे नाथ । माता, पिता, भाई, सुत, सता आदि मेरा कोई रक्षक नहीं है. केवल आपके चरण ही मेरी शरण हैं। आपको छोड़कर मेरी कोई अन्य गति नहीं है, इस प्रकार परमेश्वर के चरणों में अपने मन को स्थापित करने को ही "दीनता" कहते हैं –

जननीह नास्ति जनकोऽपि न वा
न च बन्धुता न हि सुता न सुताः।
तव नाथ केवलमिदं युगलं
स्वजनार्तिहृच्चरणयोः शरणम्॥7
गतिरस्ति नैव भवनाथ परा
तव पादपद्मयुगलेन विना ।
मम पश्च नाथ तदकिञ्चन्ता
तदनूदधराति कृपणं स्वजनम् ।।
इति सर्वथैव परमेशपदे
स्वमनौ निधाय तदसाधनताम् ।
प्रकटयाय तस्य सविधे वसतिं
विदुषांवराः कृपणतां ब्रुवते।।8

यह जीव संसार में आकर अनेक बार आवागमन करता रहता है तब कहीं जाकर अपने कमा के फल के अनुसार मानव शरीर पाता है, तब भगवान् यदि उस पर अपनी कृपा करते हैं, तो वह पुरूष विषयों से दूर होकर, कामक्रोधादि को मारने वाले मोक्ष मार्ग की चिन्ता में प्रवृत्त होता है। भगवान् की कृपा से अज्ञान का आवरण नष्ट होने पर मोक्ष में रुचि वाला होकर समस्त साधनों में अपनी असमर्थता जानकर जीव प्रपत्ति मन्दिर में प्रवेश करता है जो निरन्तर भगवान् के चरण कमलों में ही निवास करता है। भगवत्प्रतिकूल कत्यों से सदा पृथक रहता है, भगवान पर परम विश्वास रखता है। वही इस संसार में सर्वथा निर्भय होकर विचरण करता है। यह जीव कर्म दोष को नष्ट करके आनन्दपूर्वक सदा अपने शरीरपात की प्रतीक्षा करता हुआ यहाँ से जाकर दिव्य शरीर प्राप्त करके भगवान् के चरण कमलों का मधुपान करता है।

भवमेत्य भक्तगणचङ्कुमणं
स विदादधीत्यगणितं बहुशः ।
इह जीव एत्य पुनरात्मकृतेः
फलमेति मानवतनुं क्वचन ।।9

परमेश्वर स्वकृपयेव यदा
स्वदृशा विलोकत इतः स तदा ।
भवति प्रशान्तविषयोऽथ नरः
परिचिन्तयत्यरिहमोक्षपदम् ।।
भगवत्कटाक्षविधुतावरणः
समवाप्तपुण्यपुरुषार्थरुचिः ।
अवलोक्य योगनिचयऽक्षमता
विशति प्रपत्तिगृहमादरतः ।।
जगदीश पादकमलालयकः
प्रतिकूल कृत्य विरतोऽविरतम्।
परमप्रतीतितहितः सहितो
विहरत्यजत्रमिह निर्भयतः ।।
अतिपात्य कर्मकलिलं विमल
स्तनुपातमेव सततं प्रमुदा ।
प्रतिपालयन्नित इतो वितनुः
प्रभुपादपद्ममधु तत्पिबति ।।[10]

प्रपत्ति वह साधन है जिसके वश में होकर भगवान स्वयं अपने शरणागत के योगक्षेम का वहन करते है।

पाद टिप्पणी:-

1 रामपन्नददिग्विजय- 11/11

2 रमानन्ददिग्विजय- 11/13

3 रामानन्ददिग्विजय 11/14-15

4 रामानन्ददिग्विजय 11/16

5 रामानन्ददिग्विजय 11/17-18

6 रामानन्ददिग्विजय 11/19-21

7 रामानन्ददिग्विजय 11/22

8 रामानन्ददिग्विजय 11/23-24

9 रामानन्ददिग्विजय 11/25

10 रामानन्ददिग्विजय 11/26-29